'आषाढ़ का एक दिन' के स्त्री - पात्र

डॉ. संतोष कौल काक*

स्त्री – पुरुष परस्पर पूरक हैं फिर भी समाज में दोनों का स्थान सदा से भिन्न रहा है . भारतीय समाज , धर्म , शासन , कला सभी ने नारी का मानसिक , सामाजिक , आर्थिक , शारीरिक शोषण कर उसे अपने अधीन रखा . समाज के अन्य घटकों के समान ही उनके जीवन में भी अनेक समस्याएँ समय – समय पर नित नए स्वरुप में उभरती रहीं , उनके जीवन को आंदोलित करती रहीं . मनीषी , विद्वान हर युग में अनेक प्रश्नों से उलझते रहे हैं और ऐसे प्रश्नों के उत्तर यानि कि समस्याओं का समाधान तलाशने का प्रयास करते रहे हैं. इसी क्रम में नवजागरण के युग में सारी उथल – पुथल के बीच , नारी के प्रति समाज का , स्वयं उसका अपना दृष्टिकोण भी बदला . वह मात्र पुत्री , पत्नी या यूँ कहें कि पुरुष की संपत्ति बने रहने के दायरे से उभरने की कोशिश करने लगी . सर्जकों ने अपनी कलाकृतियों में समय और समाज के , विशेषकर स्त्री – समाज के विविध प्रश्नों को उभारा है . कहीं उत्तरों के साथ और कहीं बिना उत्तरों के भी .

मोहन राकेश ने भी अपने साहित्य में ऐसे अनेक छुए – अनछुए प्रश्नों को उभारा है . कहाँ है वह पुरुष जिससे सम्बन्ध बनाकर नारी स्वयं को , अपने जीवन को सार्थक अनुभव कर सके ?, कहाँ है वह पुरुष जो पूर्ण हो? निस्वार्थ भाव से स्त्री से प्रेम करनेवाला पूर्ण पुरुष . फिर प्रश्न यह भी हैं कि पुरुष यदि किसी एक स्त्री से प्रेम करता है और विवाह किसी दूसरी से , तब क्या वह नारी के अंतर , उसकी आवश्यकताओं के बारे में सोचता है ? उसके तन – मन की और अधिकारों की चिंता करता है ? यूँ कोमल भाव से युक्त श्रेष्ठ से श्रेष्ठ व्यक्ति भी स्त्री के निस्वार्थ त्याग की ही कामना करता है . पुरुष की ऐसी मानसिकता के कारण टूटती, बिखरती किन्तु फिर उठ खड़ी होती नारी की यात्रा को उनकी नाट्य - कृतियाँ प्रस्तुत करती हैं .

उनकी कृतियों में चित्रित विशिष्ट स्त्री – पात्रों के बारे में यह कथन दृष्टव्य है , " ' आषाढ़ का एक दिन ' की नारी मार – काट , नोंच – खसौंट , बेचैनी से दूर एक स्निग्ध स्थिर दीपशिखा है , आस्था के ग्लास कवर में सुरक्षित . 'लहरों के राजहंस' की नायिका की आस्था की वर्तिका जल तो रही है , पर अन्दर – बाहर के झंझावात उसकी लौ को हिलाने लगते हैं . 'आधे – अधूरे' की नारी वह दीपक है जिसको जलाकर आँधी में रख दिया गया है .चारों ओर की आँधियों , हवाओं के प्रवाह , प्रहार उसे एक दिशा में रहने नहीं देते . वह बिना प्रकाश के स्वयं भी दग्ध होती है और वातावरण में धुआँ , गैस – कालिमा बिखेर देती है .'

* एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष - हिंदी विभाग, बी. एम. रुइया गर्ल्स कॉलेज, मुम्बई।

पैर तले की ज़मीन ' की नारी स्नेह – दीप से विद्युत् दीप बन जाती है , जिसके तारों की व्यवस्था बिगड़ने से घुप्प अँधेरा भी हो सकता है और गलत विधि से हैंडल करने पर वह करंट भी मार सकती है . "1.

'आषाढ़ का एक दिन' के स्त्री - पात्रों की बात करें तो उसमें कुल पांच स्त्री - पात्र हैं . इन सभी स्त्री – पात्रों का चरित्रांकन लेखक ने बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढ़ंग से किया है . इसके प्रमुख स्त्री – पात्रों का आन्तरिक संघर्ष व उन पात्रों का इन संघर्षों के बावजूद अपने भीतर की लड़ाई लड़ते हुए भी अत्यंत सहज ढ़ंग से जीते जाना उन्हें विशिष्ट चरित्रों की श्रेणी में खड़ा कर देता है साथ ही उनका यह वैशिष्ट्य पुरुष की अहमंन्यता , कायरता व स्वार्थ का शिकार बनी नारी के प्रति करुणा उपजाता है .

इन स्त्री पात्रों में सबसे प्रमुख व प्रभावशाली चरित्र है नाटक की नायिका **मल्लिका** का . मल्लिका सीधी – सादी , भोली – भाली आकर्षक ग्राम – बाला है . वह समर्पण है , आस्था है, बलिदान के रंगों में रंगी है . मातुल उसका परिचय कुछ यूँ देते हैं , " सारे प्रदेश में सबसे सुशील , सबसे विनीत , सबसे भोली लड़की . "2. प्रथम अंक में विलोम भी उसे बहुत भोली बताता है. उसकी माता अंबिका भी उसे अत्यंत भोली समझकर चिंतित दिखाई देती है .

कालिदास से सघन भावनात्मक संबंध रखनेवाली उसकी यह प्रेयसी आकर्षक भी है . कालिदास की पत्नी प्रियंगुमंजरी भी उसकी सुन्दरता की प्रशंसा करती है . वह अल्हड भी है , और अपने प्रिय के प्रेम से सराबोर भी. पर्वतों की उपत्यकाओं में घूम – घूमकर वर्षा की पहली फुहारों में सुख – आनंद की धारा में भीतर तक भीगकर वह इतनी विभोर जाती है कि अपनी आँखें मूँद लेती है . संसार की तरफ से भी , अपने भविष्य की तरफ से भी और अपनी माता अम्बिका के गहन अनुभवों और उसकी दी गयी सीख की ओर से भी . वह भावनाओं को ही सर्वोपरि माँ , उसी में जीने में आनंद का अनुभव करती है अतः कालिदास पर अपनी जिम्मेदारी लादने की अपेक्षा वह उसके लिए अपने सुखों का बलिदान करने में विश्वास करती है क्योंकि उसने 'भावना में भावना का वरण 'किया है .

कालिदास को जब उज्जयिनी से सम्मानपूर्वक बुलावा आता है तब माँ इच्छा दर्शाती है और विलोम इस बात की ओर विशेष संकेत करते हैं कि ' कालिदास का जीवन अब तक अभावमय था , किन्तु अब नहीं रहेगा , वह विवाह करके भी जा सकता है .' इसके बावजूद रूमानियत में जी रही मल्लिका यथार्थ की अवहेलना करती हुई कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए स्वयं प्रेरित करती है . कालिदास के जाने के बाद भी मल्लिका तो वही भाव धारण किये हुए ग्राम – प्रांतर में रहती है परन्तु कालिदास के लिए वह मात्र काव्य – प्रेरणा बनकर रह जाती है . समय और स्थितियाँ कालिदास को प्रियंगुमंजरी का पति बना देते हैं और मल्लिका को वारांगना . मल्लिका समय की गति के विपरीत अतीत के अपने सम्बन्ध को सँजोने का भरपूर प्रयास करती है . पर समय कहाँ किसी के लिए ठहरता है . कालिदास कश्मीर प्रस्थान करने से पूर्व गाँव में आता है , उसके घर के पास से गुज़रता भी है , पर

मल्लिका से मिलने नहीं जाता , उसकी भावनाओं की चिंता नहीं करता . जिसका कारण वह ' मन की अस्थिरता (जिसका ज़िक्र वह बाद में मल्लिका के समक्ष करता है) को बताता है. मल्लिका से मिलने आती है उसकी परिणीता प्रियंगुमंजरी . मल्लिका से मिलकर वह कालिदास पर अपने अधिकार की चर्चा ही नहीं करती अपितु मल्लिका और उसकी स्थिति के प्रति दयाभाव से पूर्ण ओछे प्रस्तावों से उसके जले पर नमक छिड़कने का एक भी मौका नहीं चूकती . तब मल्लिका अपमान का घूँट पीकर रह जाती है और उसे समय के बीतने का भान होता है . आषाढ़ की वर्षा में पुनः भीगने की बलवती इच्छा को लेकर वह भीतर ही भीतर घुटती रहती है . प्रतिवर्ष आषाढ़ आता है , मेघ छा जाते हैं . और उस वर्षा में न भीग पाने की कसक मल्लिका के मन के किसी भीतरी कोने में अधूरी , अपूर्ण बनी ही रह जाती है . जितना तूफ़ान बाहर है उससे कहीं घना तूफ़ान उसके मन में ही गरजता – लरजता रह जाता है . संस्कृत में ' दुर्दिन ' कहे जानेवाले मेघियल दिन पहले अंक की समाप्ति तक मल्लिका के लिए भी दुर्दिन के रूप में बदल कर उसे जीवन भर तडपाते हैं .

माता की मृत्यु के उपरान्त जीवन के अनुभवों एवं यथार्थ की कठोरता से अनजान निराश्रया , एकदम अकेली मल्लिका के पास जीविकोपार्जन का कोई साधन नहीं रह जाता – सिवाय तन के . उस विनिमय में जीविका के साथ एक हरिण – शावक सी बच्ची भी वह पा जाती है .

अपराध – बोध मल्लिका में बिलकुल नहीं है . वह न तो एक बदनाम किशोरी के रूप में , न निक्षेप द्वारा कालिदास की आलोचना (द्वितीय अंक में) करने पर , न ही नाम खोकर विशेषण बन जाने (तृतीय अंक में) की अवस्था में और न ही ' अभाव की उस संतान ' को कालिदास के सामने बाँहों में ले जाने पर अपराध – बोध महसूस करती है .

वह राजकुल का कोई भी अनुग्रह स्वीकार नहीं करती . कश्मीर जाकर प्रियंगुमंजरी जो उपहार उसे भेजती है – उसे भी वह सधन्यवाद लौटा देती है . अपने वर्तमान से गहरा असंतोष होते हुए भी वह उसे जीती है . विवाह - प्रसंग को लेकर वह स्वयं को स्वतंत्र मानती है . इस विषय में उसका यह मानना है कि उसका जीवन उसकी अपनी संपत्ति है और उसके जीवन की आलोचना का अधिकार वह किसी को भी नहीं देना चाहती . "क्या अधिकार है उन्हें कुछ भी कहने का? मल्लिका का जीवन उसकी अपनी संपत्ति है . वह उसे नष्ट करना चाहती है तो किसी को उस पर आलोचना करने का क्या अधिकार है ? "3. हालाँकि प्रियंगुमंजरी द्वारा रखे गए विवाह – प्रस्तावों के समय उन्हें अस्वीकार करने के बावजूद वह उसे उतनी कठोरता से उत्तर नहीं देती जैसे कि अपनी माँ को या विलोम को दे चुकी है.

अपने भाव के कोष्ठ को रिक्त न होने देकर ' अभाव के कोष्ठ में न जाने कितनी आकृतियों को विवशता में प्रवेश करने देना ' , और उन्हीं में से शायद किसी एक की संतान को ' अभाव की संतान ' के रूप में जन्म देना उस भव्य चरित्र की संगति में ठीक नहीं लगता . इस अप्रत्याशित , अनपेक्षित , असंगत घटना की अपेक्षा वह प्रियंगुमंजरी का प्रस्ताव ही क्यों नहीं स्वीकार कर लेती – यह प्रश्न ज़रूर मन में उभरता है . रचनाकार

राकेश शायद तन और मन दोनों के पक्ष अलग दिखाना चाहते हों. और उसे ऐसे स्त्री – चरित्र के रूप में प्रस्थापित भी करना चाहते हों जो अपने निर्णय – स्वातंत्र्य को किसी भी मूल्य पर बाधित नहीं होने देना चाहती .

उसके अपने स्वप्न हैं और अपनी ही आकांक्षा भी . सर्वोपरि आकांक्षा है उसकी , अपना सर्वस्व समर्पित कर कालिदास के व्यक्तित्व को महान कवि के रूप में स्थापित होते देखना . समस्त वितृष्णा , आत्मग्लानि और टूटन के पीछे एक संतोष , " तुम रचना करते रहे , और मैं समझती रही कि मैं सार्थक हूँ , मेरे जीवन की भी कुछ उपलब्धि है . और आज तुम परे जीवन को इस तरह निरर्थक कर दोगे ? "4.

इसीलिए तो विलोम की कटूक्तियों , अम्बिका द्वारा की जानेवाली भर्त्सना , प्रियंगु के अपमानजनक संकेत , कालिदास का उसे मिलने न आना उसे इतनी ठेस नहीं पहुंचाते , जितनी कि कालिदास के संन्यास लेने की खबर .

पर वह आस्थावान है . स्वयं नाटककार ने कहा है , " मल्लिका भूमि में रोपित वह स्थिर आस्था है जो ऊपर से झुलसकर भी अपने मूल में विरोपित नहीं होती . "5 दुर्दिन में भी आस्था , आत्मविश्वास व दृढ़ता के कारण उसका व्यक्तित्व सबसे महान लगता है . प्रियंगुमंजरी के शब्दों की चोट के बावजूद , या फिर और किसी भी स्थिति में वह कालिदास को अपने दुःख के लिए जिम्मेदार नहीं मानती और किसी के मुख से उसके विरोध में कुछ सुनना नहीं चाहती . गिरीश रस्तोगी का मानना हैं कि , " मल्लिका राकेश की आकांक्षा है , कल्पना नहीं , एक ऐसी नारी जो रचनाकार के लिए प्रेरक हो , सहायक हो , कहीं भी बाधक नहीं . "6.

दुर्दिन में भी वह कालिदास का काव्य मँगवाकर पढ़ती है . उसके लिए पुस्तकों के पृष्ठ सँजोकर रखती है . पर जब कालिदास समय - चक्र को उलटे घुमाने की कोशिश करता है तो वह उसका अनुसरण करने की बजाय वात्सल्य व मातृत्व के कारण अपनी बच्ची को सीने से लगाए – आधुनिक नारी से शाश्वत नारी के आदर्श को अपनाती दीखती है . प्रथम दो अंकों की समाप्ति सिसकती मल्लिका के अपनी माँ की गोद में छुप जाने से होती है , तीसरे में भी एक बेटी एक माँ की गोद में है , फर्क सिर्फ इतना है कि पहले अंक की बेटी अब माँ बन चुकी है .

नाटक की दूसरी पात्र है **अम्बिका** , जो वात्सल्य की कोमलता से युक्त एक ग्रामीण स्त्री है . यौवनावस्था में एक महामारी में पति की मृत्यु के बाद असमय वैधव्य का भोग बनी वह अपना सारा ध्यान अपनी पुत्री पर केन्द्रित कर देती है . पुत्री को जीवन में कोई अभाव न खले इसके लिए वह तिल – तिल मिटती है . जीवन के यथार्थ ने उसे भाग्यवाद की अपेक्षा कर्म पर विश्वास करना सिखाया है . किन्तु अपनी दुलारी और भोली – भाली , स्वप्नजीवी बेटी को भावनाओं में बह कल्पना की उड़ान भरते व कालिदास से सम्बन्ध जोड़ते देखकर उसे चोट पहुँचती है . उसकी बदनामी से वह कालिदास के प्रति वितृष्णा और खीज से भर

उठती है . आँख मूंदकर जीने की उसकी अवस्था बीत चुकी है . जब उसकी पैनी , अनुभवी और इस भौतिकवादी जगत को परख चुकी व्यावहारिक दृष्टि यह समझ जाती है कि एक कल्पनाजीवी पराश्रित के साथ बंधकर बेटी का भाग्य भौतिक सुख – सुविधाओं से वंचित हो दुःख व अभावों से भर जाएगा तो अपनी साधना के टूटने के बोध से वह भीतर तक बिंध जाती है , इसी कारण कालिदास की हर गतिविधि में उसे छल , प्रपंच व प्रतारणा नज़र आती है . कालिदास की कठोरतम आलोचक बनकर वह उसपर व्यंग्य ही नहीं करती , अपितु जब तक वह जीवित रहती है , अपनी बेटी को जीवन की व्यावहारिकता समझाने का अनथक प्रयास भी करती है. "तुम जिसे भावना कहती हो वह केवल छलना और आत्म – प्रवंचना है. भावना में भावना का वरण किया है ! ... मैं पूछती हूँ भावना में भावना का वरण क्या होता है ? उससे जीवन की आवश्यकताएँ किस तरह पूरी होती हैं ? "7. वितृष्णा से भरी अम्बिका को बेटी की भावना 'छलना' व आत्मप्रवंचना लगती है . वह कालिदास को पसंद नहीं करती , फिर भी उससे मल्लिका के विवाह – सम्बन्ध को तैयार हो जाती है ताकि बेटी को लोकापवाद से बचाकर उसका भविष्य सुरक्षित कर सके . बेटी मल्लिका के साथ अभावों में दिन बिताते हुए वह मल्लिका के अभावों , दुखों , वेदनाओं , पीडाओं , अंतर की रिक्तताओं को पहचानती और समझती भी है . बेटी के भविष्य की चिंता उसके मन , प्राण व आत्मा को तोड़ देती है . पर वह कुछ कर – कह नहीं पाती . हाँ , जब तक संभव है – पुत्री के लिए पिसती – निचुड़ती रहती है .

राजमहिषी प्रियंगुमंजरी द्वारा घर की भित्तियों के परिसंस्कार कर देने व मल्लिका के समक्ष रखे गए विवाह के प्रस्ताव जैसे दर्प पूर्ण ओछे व्यवहार से उसे बहुत कष्ट पहुँचता है वह तनाव व खीज से भरकर छटपटाती हुई बीमारी में भी उठ खड़ी होती है क्योंकि बेटी को पहुँची पीड़ा उसे बेहद कष्ट देती है . मल्लिका की भावना तथा ' मेघदूत ' में कालिदास की भावना के साकार हो उठने की बात से मानो वह विक्षिप्त – सी होकर मल्लिका को बड़े व्यंग्य से ' पत्थर बटोरकर रखने ' का आदेश देती है . वह कई वर्ष बीमार रहती है . अंततः खांसी व उसका शीर्ण स्वास्थ्य उसकी जान ले लेते हैं . उसके स्वभाव की कठोरता , आक्रोश व कडवाहट के बीच से भी मातृत्व की करुणा , वात्सल्य , पीड़ा एवं सहानुभूति झरने की तरह बहते दीखते हैं . यूँ कह सकते हैं कि उसमें यथार्थ के कारण उपजी कठोरता , मातृत्व की कोमलता व करुणा का अद्भुत व हृदयस्पर्शी सम्मिश्रण है .

इस नाटक की अन्य महत्वपूर्ण स्त्री – पात्र है **प्रियंगुमंजरी** . प्रियंगु एक परम विदुषी राजकन्या है , जिसपर लक्ष्मी और सरस्वती दोनों की ही कृपा है . मनचाहा पति पाकर वह उसकी काव्यात्मक उपलब्धियों के प्रति गर्व – अभिमान से भर उठती है , व प्रसन्नता का अनुभव करती है . वह पति को ' कालिदास ' नहीं अपितु ' मातृगुप्त ' कहलवाना पसंद करती है . अपने पति को वह राजनीति में बाँधे रखना चाहती है और नहीं चाहती कि वह अपने गाँव या अपनी जड़ों की ओर लौटे . वह ' साहित्य को कालिदास का पहला और

राजनीति को आगे की ओर बढ़ता हुआ दूसरा चरण ' मानती है . सत्ता – वर्ग की प्रतिनिधि होने की वजह से , उसी परिवेश में पली – बढ़ी होने से वह राजनीति के दाँव – पेचों में भी माहिर है . आभिजात्य वर्ग में पाया जानेवाला दर्प भी उसकी बातों और अंदाज़ में झलकता है. एक तरफ तो वह अपने पति को वह जैसा है वैसे ही स्वीकार कर लेती है पर उसे वैसा बने नहीं रहने देना चाहती , अपितु उसे अपनी स्थितियों और नए आभिजात्य परिवेश के अनुरूप बनाने के लिए , उसे बदलने की भरसक कोशिश भी करती है . तो दूसरी तरफ वह पतिपरायण , कर्तव्य परायण बनने की कोशिश भी करती है . पति का राज्य – वैभव के बीच रहकर भी उदास रहना उसे अखरता है . पति से उसने जो पाया है वह बाह्य है . रंक को राजा बनाकर भी वह उसके मन व आत्मा को स्पर्श नहीं कर पाती .

उसके भीतर की पत्नी सोचती है अपने ग्राम – प्रांतर की स्मृति के कारण इनका राज्य – कार्य में मन नहीं लगता . यह सोचकर वह यह प्रयास और व्यवस्था करती है कि उनके बाल्यकाल के परिवेश को ही अपने साथ उठाकर ले जाए, ताकि पति उदास होने की बजाय सदा प्रसन्न रहें . इसीलिए यात्रा में पति के ग्राम से होकर वह सायास गुज़रती है . पति की बाल सखा के प्रति उत्सुकता भी इसका एक कारण है , और वह उससे भी मिलती है . उसे और समस्त ग्राम के सौन्दर्य को वह अपने साथ ले जाना चाहती है . वह यह सोच ही नहीं पाती कि भौतिक साधन या सम्पन्नता तृप्ति व प्रसन्नता नहीं दे सकते . हैरानी की बात है कि समझ तो बाद में सब जाती है पर कालिदास पर क्रोध नहीं , न उनसे कोई प्रश्न करती है वो. बल्कि उसकी प्रसन्नता के लिए , उसका मन बदलने के प्रयास में एक आम औरत की तरह वह लगी रहती है .

वह संस्कारी है , विनम्र भी है , व्यवहारकुशल भी है और शिष्ट भी. पर अपनी कुलीनता , विद्वत्ता व सौन्दर्य का अभिमान लिए जब वह मल्लिका से साक्षात्कार करती है तो उसके भीतर की स्त्री और पत्नी मल्लिका के आगे हीनता , ईर्ष्या व घबराहट का अनुभव करती है. निरंतर अपना दर्प एवं अपनी महत्ता दिखाने का प्रयास उसकी इसी पराजय व खिसियाहट के कारण उभरता दिखाई देता है . अपने वैभव का बखान कर , मल्लिका को उसकी गरीबी का अहसास कराकर वह मल्लिका के सुकुमार मन पर कई बार प्राणान्तक आघात करती है . अपनी सुकुमार विजयिनी प्रतिद्वंदी के सुकुमार मर्म को चोट पहुँचाकर उसे चाहे संतुष्टि मिलती हो पर अनुनासिक व अनुस्वार जैसे मूर्ख निकम्मे अधिकारियों से मल्लिका के विवाह का उसका प्रस्ताव पाठक – दर्शक के हृदय को भीतर तक भेदकर उन्हें द्रवीभूत कर देता है . इसी कारण वह पाठक के मन में किसी प्रकार की सहृदयता या प्रेमभाव नहीं जगा पाती . और वह स्थान मल्लिका को मिल जाता है .

वह मल्लिका के वास्तविक दुःख को , दुःख के कारण को , कालिदास के लिए किये हुए उसके त्याग को जानते हुए भी अनजान बनकर , बाह्य विधानों से उस क्षतिपूर्ति का असफल प्रयास करती है .काश्मीर जाकर वह मल्लिका के लिए वस्त्र – रत्नादि भेजती है , पर इस

सबके बावजूद उसकी त्रासद स्थिति अंत में तब करुणा ही उपजाती है जब उसकी सारी कोशिशों के बावजूद कालिदास उसे काश्मीर की राजनितिक आग में झुलसने के लिए अकेला छोड़कर पलायन कर जाता है .

रंगिनी – संगिनी नगर में रहनेवाली पढ़ी – लिखी विदुषी , संभ्रांत महिलाएँ हैं . उज्जयिनी के राज्य से महाकवि कालिदास के जीवन पर शोधकार्य हेतु उन्हें सरकारी निधि से सहायता प्राप्त होती है . वे महाकवि के जीवन के विषय में सूक्ष्म जानकारियों की तलाश करते हुए कालिदास की शैशव – स्थली पहुँचती हैं . कालिदास जैसी महान विभूति को जन्म देनेवाली भूमि निश्चित ही असाधारण होगी ऐसी उनकी कल्पना है . ऐसी कल्पना से भरी सत्ता और सुविधा संपन्न वर्ग की वे दोनों स्त्रियाँ जब कालिदास के ग्राम प्रदेश में पहुँचती हैं तो वहाँ की प्रत्येक वस्तु को साधारण देखकर उन्हें हैरानी भी होती है और निराशा भी .

हर चीज़ को अतिरिक्त उत्साह , उत्सुकता से देखने की उनकी प्रवृत्ति से उनकी कृत्रिमता तो झलकती ही है , साथ ही रचनाकार ने उनकी या उनके जैसे अनुसंधानकर्ताओं , छात्रों की शोध – वृत्ति पर भी व्यंग्य किया है , जो विषय या वस्तु को समझने के लिए उसकी आत्मा में प्रविष्ट होने की बजाय केवल बाह्य उपकरणों पर केन्द्रित होकर रह जाती है .

इस तरह नाटककार मोहन राकेश ने पुरुषप्रधान समाज के दृष्टिकोण के कारण उपजी स्त्री – जीवन की विड़म्बनापूर्ण त्रासद स्थितियों का प्रभावी चित्रण ' आषाढ़ का एक दिन ' में किया है . और अनेक सवाल भी जगाए हैं पाठक के मन में . जैसे कि ' क्या कालिदास को मल्लिका को छोड़कर चला जाना चाहिए था ? ', क्या मल्लिका का उसपर इतनी आस्था रखना ठीक था? ', 'क्या वारांगना बनने के अलावा मल्लिका के पास और कोई रास्ता न था जीवन – यापन का ? ', 'क्या उसे दर किनार कर चुके कालिदास की रचना की प्रतियाँ पाने के लिए मल्लिका का इतने वर्षों तक देह – विक्रय का कष्ट भोगना ठीक था? , या फिर 'कालिदास का मल्लिका को दुबारा छोड़ जाना कहाँ तक उचित था? ', 'मल्लिका का अंत में अपनी बच्ची के लिए रुक जाना उचित था? '– ऐसे अनेक प्रश्न हैं जो तब तक समाप्त नहीं होंगे जब तक हम अंतर की आवाज़ के लिए अपने कान बंद करके जीवन जीते चले जाएँ, उत्तर इतनी शीग्र न मिलेंगे. जिस दिन इन प्रश्नों के उत्तर मिल जाएँगे , कई मल्लिकाओं के जीवन बदल जाएँगे.

निष्कर्ष रूप में डॉ . पुष्पा बंसल के कथन से सहमति जताते हुए अंत में यही कहना उचित लगता है कि , " नारी भावनामयी हो , स्थूल आवश्यकताओं की मौन भाव से उपेक्षा करनेवाली हो , पति के हित के सामने अपने स्वार्थ का उद्घोष करने से कतरानेवाली हो , अथवा अपनी कामना को किसी काल के लिए स्थगित न करनेवाली , जीवन के यथार्थ को मौन हो , चुपचाप सहन कर कब्रिस्तान बन जानेवाली हो अथवा अपनी इच्छाशक्ति व प्रयत्नशीलता के द्वारा जीवन को अपने अनुसार मोड़नेवाली , पुरुषों के निर्णयों , इच्छाओं , उन्नतियों के लिए चुपचाप अभावमय जीवन बिता देनेवाली हो अथवा पति में एक पूरी

शख्सियत का माद्दा देखने , उसे पति में उभारने के लिए एड़ी – चोटी का जोर लगानेवाली हो... हर हाल में उसे एक अतृप्ति , अपूर्ति , विवशता , दयनीयता व असफलता का बोध होता है . चाहे जिस परिस्थिति में रख दिया जाय , उसकी नियति व उसके जीवन का सत्य एक ही है , अवसाद , असफलता एवं रिक्तता . "8.

सन्दर्भ सूची

1. मोहन राकेश का नाट्य – साहित्य , डॉ. पुष्पा बंसल , पृ . सं . 11 .
2. आषाढ़ का एक दिन , मोहन राकेश , पृ . सं . 64 .
3. वही , पृ . सं . 12
4. वही , पृ . सं . 93 .
5. लहरों के राजहंस (भूमिका) , मोहन राकेश .
6. मोहन राकेश और उनके नाटक , गिरीश रस्तोगी , पृ . सं . 72 .
7. आषाढ़ का एक दिन , मोहन राकेश , पृ . सं . 13 .
8. मोहन राकेश के नाटक तथा नाट्य – शिल्प , डॉ, पुष्पा बंसल , पृ . सं . 85 – 86 .